Volume 3; Issue 2
April to Jun 2026

E-ISSN: 3048-6742

Sanskriti-Samvahika

संस्कृति-संवाहिका

Peer Reviewed Indexed Refereed Journal

Quarterly Journal

Sanskriti-Samvahika संस्कृति-संवाहिका
E-ISSN: 3048-6742
https://sanskritisamvahika.in
https://doi.org/10.5281/zenodo.21623159
Volume 3; Issue 2; April to Jun, 2026; Page No. 1-8
Peer Reviewed, Indexed and Refereed Journal

भास के रूपकों में भारतीय ज्ञान परम्परा एवं संस्कृति

डॉ. अश्विनी देवी

सहायक आचार्य, संस्कृत विभाग,

ईश्वर शरण डिग्री कॉलेज, प्रयागराज

संध्या यादव

शोधच्छात्रा, संस्कृत विभाग,

ईश्वर शरण डिग्री कॉलेज, प्रयागराज

सारांशिका

भारतीय ज्ञान परम्परा का प्रादुर्भाव वैदिक काल से दृष्टिगोचर होता हैं। वेद भारतीय संस्कृति और ज्ञान का आधार स्तम्भ हैं। वेदों में निहित मूल तत्त्व हि उत्तरोत्तर विस्तार को प्राप्त होकर पुराणों एवं धर्मशास्त्रादि के माध्यम से भारतीय संस्कृति को मूर्तिमान स्वरूप प्रदान करते हैं। भास ने प्राचीन महाकाव्य रामायण और महाभारत से प्रेरित होकर कथानक को नाटक के रूप में प्रस्तुत किया है, जिसमें उस समय प्रचलित सामाजिक आर्थिक व्यवस्था का स्वरूप देखने को मिलता है। जहाँ धर्म, करुणा, न्याय, त्याग और वीरता जैसे मानवीय गुणों को दिखाया है। भास ने न केवल ऐतिहासिक घटनाओं को जीवित किया है बल्कि नवीन दृष्टि डालकर यथार्थ जीवन को दिखाया है। महाकवि भास ने सरल भाषा - शैली द्वारा भारतीय ज्ञान परंपरा के प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है । इस शोध - पत्र में भास के नाटकों के द्वारा भास कालीन जीवनमूल्य को भारतीय ज्ञान की दृष्टि से देखने का प्रयास किया गया है।

मुख्य शब्द: भास, साहित्यिक योगदान, संस्कृति, भारतीय ज्ञान परम्परा, रामायण, महाभारत, वर्णव्यवस्था।

भारतीय ज्ञान परम्परा केवल सभ्यता और संस्कृति की पहचान ही नही अपितु मानव जीवन के लिए एक अमूल्य निधि है, जो सहस्रशताब्दियों से धर्म, दर्शन, नीति, करुणा और सौन्दर्य के माध्यम से मनुष्य को दिशा देती है। यह परम्परा वैदिक से लेकर लौकिक साहित्य के माध्यम से जीवन के उद्देश्य को समझने और व्यवहार में उतारने में सहायक हैं।

यद्यपि वेद भारतीय ज्ञान परम्परा एवं संस्कृति का आधार स्तम्भ है जो अपौरुषेय हैं। किन्तु यह परम्परा महाकाव्यों और नाटकों के माध्यम से अधिक प्रसारित हुई । यह साहित्य परम्परा शास्त्रविहित ज्ञान को लोक-जीवन से जोड़कर नैतिक, सांस्कृतिक और धार्मिक महत्त्व को जन-सामान्य तक पहुंचाने में प्रभावशाली कार्य किया हैं। भारतीय सांस्कृतिक परम्परा मे नाटक केवल लोकानुरंजन का ही नहीं अपितु ज्ञानार्जन का भी स्रोत है।

महाकवि भास संस्कृत- साहित्य में आदि नाटककार के रूप में जाने जाते है जिसका वर्णन कालिदास, बाणभट्ट,राजशेखर आदि परवर्ती कवियों ने अपने ग्रन्थों में किया है। भास के 13 नाटकों को 1912 ई. मे टी. गणपति शास्त्री द्वारा प्रकाशित किया गया। वे पाण्डुलिपियाँ केरल के त्रिवेंद्रम में संरक्षित थी । इन नाटकों ने उस समय की संस्कृति और सभ्यता को नाट्यमञ्चन के माध्यम से लोगों तक पहुंचाया। इसप्रकार पौराणिक कथाएँ आम लोगों की भावनाओ से जुड़कर भारतीय ज्ञान के प्रवाह में योगदान देती रही हैं।

इस शोध - पत्र का उद्देश्य भारतीय ज्ञान परम्परा के सन्दर्भ में महाकवि भास के नाटकों का अध्ययन करना है। इसके माध्यम से हम तात्कालीन समाज की संरचना,आर्थिक स्थिति, राजव्यवस्था तथा धार्मिक जीवन का विश्लेषण कर सकते हैं। आधुनिक परिप्रेक्ष्य में इन नाटकों का रङ्गमञ्च के द्वारा मञ्चन सामाजिक राजनीतिक और मानसिक चेतना के विकास के लिये किया जा सकता है, जिससे समकालीन समाज में जागरुकता, राजनीतिक दूरदर्शिता, आर्थिक समृद्धि तथा लोकहित की भावना, वर्तमान के सतत विकास तथा कल्याणकारी राज्य की संकल्पना को दिखाया जा सके।

भास के नाटको का उपजीव्य ग्रन्थ मुख्यतः रामायण और महाभारत है जिसमें प्राचीन वैभवशाली ज्ञान सम्पदा दिखाई देती है जो वर्तमान सामाजिक परिवेश के लिए प्रासङ्गिक है। साहित्य समाज का प्रतिबिम्ब होता हैं। भास के नाटकों में उस समय प्रचलित सामाजिक आदर्शों का परिचय मिलता है। समाजिक व्यवस्था का आधार वर्ण व्यवस्था था जिसकी उत्पत्ति का वर्णन सर्वप्रथम ऋग्वेद के पुरुष सूक्त में देखने को मिलता है ।

ब्राह्मणोऽस्य मुखमासीद् बाहु राजन्यः कृतः।

उरू तदस्य यद्वैश्य पद्भ्यां शुद्रो अजायत[1]।।

समाज ब्राह्मण, क्षत्रिय ,वैश्य और शूद्र इन चार भागों में वर्गीकृत था, जिनके वर्गीकरण का आधार उनका कार्य था। किन्तु धर्म के लिए द्रोणाचार्य का क्षत्रियवृत्ति और विश्वामित्र का ब्राह्मणवृत्ति स्वीकारने जैसी घटनाएं देखने को मिलती हैं। भास ने भी वर्ण व्यवस्था का उल्लेख करते हुए अपने विचार "अविमारक'' में दिया है। उस समय कर्माधारित जाति व्यवस्था बाद में चलकर जन्माधरित हो गयी।

दैवं रूपं ब्रह्मजं तस्य वाक्यं

क्षाचं तेजः सौकुमार्य बलं च।

यद्येवं स्यात् सत्यमस्यान्त्यजत्वं

व्यर्थोऽस्माकं शास्त्रमार्गेषु खेदः[2]॥

वैदिक काल से चली आ रही आश्रम व्यवस्था का समर्थन करके महाकवि ने एक सशक्त समाज का निर्माण किया है। ब्रह्मचर्य, गृहस्थ , वानप्रस्थ और संन्यास - यह आश्रम व्यवस्था मनुष्य को उन्नति और आध्यात्मिक उत्कर्ष की ओर ले जाता है। जिसे भारतीय संस्कृति मे मानव के विकास का साधन माना जाता है। भास ने अनेक स्थानों पर तात्कालिक पारिवारिक जीवन का वर्णन किया है जहां इन्होंने राजपरिवार तथा सामान्य परिवारों का आधार परस्पर प्रेम और कर्तव्य को बताया है। नाटकों को के अध्याय से यह ज्ञात होता है कि उस समय सामूहिक परिवार का प्रचलन था।

राजपरिवार हो या सामान्य परिवार, उनका ज्येष्ठ ही राजा या मुखिया होता था। राजा का आदेश सर्वमान्य था। प्रतिमानाटक में राम ने पिता के आज्ञा पालन के लिए सहज ही चौदह वर्षों के लिए वन - वन भटकना स्वीकार कर लिया[3]। वही सामान्य परिवार में भी देखने को मिलता है। प्रत्येक व्यक्ति एक दूसरे के लिए प्राणों की भी चिन्ता नहीं करता ।भास के नाटक 'मध्यमव्यायोग' में यही घटना देखने को मिलता है जिसमें केशवदास नामक ब्राह्मण परिवार का प्रत्येक सदस्य एक दूसरे के प्राणों की रक्षा के लिए अपने प्राण देने के लिए भी तैयार था।

कृतकृत्यं शरीरं मे परिणमेन जर्जरम् ।

राक्षसाग्नौ सुतापेक्षी होष्यामि विधि संस्कृतम्।[4]

भास के रूपकों के अध्ययन से ज्ञात होता है कि भारतीय संस्कृति मे अतिथि सत्कार का बड़ा ही महत्त्व दिखाई देता था। **स्वप्नवासवदत्तम्' के प्रथम अङ्क में कंचुकी का ब्रह्मचारी से 'प्रतिगृह्यतामतिथिसत्कारः' कहना सामान्य व्यवहार में विशिष्टता का परिचायक है। 'स्वप्नवासवदत्तम्' नाटक के छठे अङ्क में यौगन्धरायण के ब्राह्मण-वेष में आने पर राजा उसे 'शीघ्र प्रवेश्यतामभ्यन्तरसमुदाचारेण' कह कर सत्कार प्रदर्शित करता[5]।**

भारतवर्ष आरम्भ से ही पुरुष प्रधान समाज रहा है परंतु भास के समय में स्त्री भी समाज का एक अभिन्न अंग थी वह माता, पत्नी ,पुत्री ,गृहिणी आदि विभिन्न रूपों में अपने कर्तव्यों का पालन करती थी। राजा अपने परिवार की समस्या समाधान के लिए रानी से विचार विमर्श करता था। 'प्रतिज्ञायौगन्धरायण' में राजा अपनी पुत्री वासवदत्ता के विवाह के विषय में परामर्श के लिए रानी को सभा भवन में बुलाते हैं।

दुहितः प्रदान काले दुःखशीला हि मातरः।

तस्मात् देवी आहूयताम्।।[6]

यह परम्परा बाद में चलकर स्त्री को शिक्षा, राजनीति तथा रोजगार आदि विभिन्न क्षेत्रों मे सम्मानपूर्ण भागीदारी देकर राष्ट्र की उन्नति में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई हैं। राज परिवार में बहुविवाह होता था। 'प्रतिमानाटक' में राजा दशरथ की तीन रानियो का नाम आया है और 'स्वप्नवासवदत्ता' में राजा प्रद्योत की सोलह रानियो का उल्लेख मिलता है- **षोडशान्तःपुर ज्येष्ठा..[7]।** भास ने नारी के लिए उसके पति को सर्वोपरि बताया है और उनका कथन है कि पतिव्रत धर्म ही सबसे बड़ा धर्म है [8]। घटोत्कच प्रकरण में ब्राह्मणी अपने पति के स्थान पर स्वयं ही बलि के लिये प्रस्तुत होती है और पतिव्रता सीता लंका में राक्षसियो के बीच होते हुए भी रावण के प्रस्ताव को स्वीकृती नहीं देती हैं[9] । धर्मक्षेत्र में भी पुरुष के समान ही अधिकार था। स्त्री सहभागिनी और सहधर्मिणी के रूप में मान्य थी।[0]। प्रतिमानाटक की कैकयी राजा दशरथ को ऋषि के शाप से बचाने के लिए पुत्र को वनवास देती है परंतु नाटक में भास के मौलिक परिवर्तन से स्पष्ट है कि उनके समय में माता पूजनीय थी इसलिए वहा कैकयी की विवशता को दिखाया गया है।

भास के नाटकों में स्त्री शिक्षा को देखे तो ज्ञात होता है कि उस समय की स्त्रियां विभिन्न कलाओं में पारङ्गत थी। विशेषत: उन्हें संगीत का ज्ञान भली -भाति प्राप्त था। जहां 'वासवदत्ता' और 'प्रतिमानाटकम्' में नटी का सूत्रधार के कहने से दर्शकों के मनोरंजन के लिए शरद ऋतु का गीत गाते दिखाया गया है। **सूत्रधारः- आर्य !**

इममेवेदानीं शरत्कालमधिकृत्य गीयतां तावत् ।[11] भास के नाटकों मे स्त्रियों की सुरक्षा का विशेष ध्यान दिया जाता था। उनके निवास के लिए अन्तःपुर होता था जहां किसी वाह्य पुरुष का जाना वर्जित था। उस समय में पर्दा प्रथा का वर्णन 'प्रतिमानाटकम्' में मिलता है। राम वन जाते समय सीता से अवगुण्ठन उठाने को कहते हैं-**रामः - मैथिलि ! अपनीयतामवगुण्ठनम्** ।[12] और वही अवन्तिका के वेश में वासवदत्ता अवगुण्ठन में थी जिसको देखने के लिए उदयन आदेश देते हैं- **संक्षिप्यतां जवनिका** [13]।

भासयुगीन राजनीतिक परिदृश्य अत्यन्त ही प्रभावपूर्ण और सार्वजनिक हित से पूर्ण थी। जहाँ राजा का अपनी प्रजा के प्रति कर्तव्य और राज्यक्षेत्र में योगदान देंना पड़ता था। अविमारक में इसका वर्णन करते हुए बताया गया है कि राज्य भी एक भार हैं क्योंकि राजा को पहले- धर्म , मंत्रियों की गतिविधि , राग द्वेष,सहजता और दृढ़ता ,दूत ,प्रजा का कल्याण और अपनी रक्षा ये सब कार्य करने होते है -

धर्मः प्रागेव चिन्त्यः सचिवमतिगतिः प्रेक्षितव्या स्वबुध्दया प्रच्छाद्यौ

रागरोषौ मृदुपरुषगुणौ कालयोगेन कार्यौ।

ज्ञेयं लोकानुकृतं परचरनयनैर्मण्डलं प्रेक्षितव्य रक्ष्यो

यत्नादिहात्मा रणशिरसि पुनः सोऽपि नावेक्षितव्यः।[14]

प्रजा का कल्याण राजा का प्रथम कर्तव्य होता है। श्री कृष्ण ने कालिया मर्दन कर यमुना को नागों के प्रभाव और विष से मुक्त किया। **सितेतराभुग्नदुकूलकान्ति-द्रुतेन्द्रनीलप्रतिमानवीचिम्। इमामहं कालियधूमधूम्रां सान्तर्विषाग्नि यमुनां करोमि ॥**[15]

प्रजा पालक राजा की प्रशंसा होती थी। उसके अदम्य साहस, प्रजावत्सलता , जनसेवा की अभिप्रेरणा को प्रदर्शित किया गया है। यह परम्परा सदैव से भारत में विद्यमान रही हैं। कर्णभार के भरतवाक्य में कुशल राजा का वर्णन प्राप्त होता है। योग्य राजा प्रजाहित को सर्वोपरि रखता है ।

सर्वत्र सम्पद सन्तु नश्यन्तु विपद सदा ।

राजा राजगुणोपेतो भूमिमेक प्रशास्तु न ॥ [16]

उस समय में भी दूत व्यवस्था का प्रचलन था। एक राज्य दूसरे राज्य के लिए राजदूत से संदेश भेजवाता था। किसी राज्य के गुढ़ तत्व को जानने के लिए गुप्तचर भी राजाओं द्वारा नियुक्त किए जाते थे ।

भास के समय में लोगो का वैदिक धर्म के प्रति आस्था और विश्वास था। पत्नी का अपने पति के दीर्घायु के लिए उपवास करने का वर्णन देखने को मिला है जहाँ चारुदत्तम् में नटी अभिरूप- पति नामक व्रत सूत्रधार के लिए करती है।[17]। देवता को प्रसन्न करने के लिए यज्ञ किए जाते थे और बलि देने की भी परम्परा थी। 'प्रतिज्ञायौगन्धरायण' में उदयन को बलि के लिए बाधा गया था जिसकी उपमा प्रद्योत बधे हुए शेर से करते है-

अत्रं पश्यन्तु मे पौराः श्रुतपूर्वं स्वकर्मभिः । सिंहमन्तर्गतामर्प यज्ञार्थमिव संयतम् ॥[18]

उस समय के लोग यज्ञ करना और ब्राह्मणों का पूर्णत: सम्मान कर स्वयं को सौभाग्यशाली समझते थे। यज्ञ केवल कर्मकाण्ड हि नहीं है अपितु सामाजिक सद्भाव, पर्यावरण संरक्षण तथा उत्तम स्वास्थ्य का माध्यम है। आधुनिक युग में यज्ञ नैतिक उन्नति के साथ आध्यात्मिक तथा वैज्ञानिक दोनों ही दृष्टिकोण से समाज के लिये महत्त्वपूर्ण हैं।

इष्टा मखा द्विजवराश्च मयि प्रसन्नाः

प्रज्ञापिता भयरसं समदा नरेन्द्राः ।[19]

उस समय में भी कार्य सिद्धि के लिए ईश्वर को प्रसन्न करने का प्रचलन देखने को मिलता हैं। यौगन्धरायण इच्छा की पूर्ति भाग्य और ईश्वर द्वारा किए जाने की बात करते है - **जाग्रतो अपि बलवत्तरःकृतान्तः ।**[20] समाज में दान का भी प्रचलन था। जिसको जो अभीष्ट हो मांग सकता था । गरीब और भिक्षु मात्र को ही नहीं अपितु आश्रम के तपस्वियों को भी दान देने का वर्णन प्राप्त होता हैं।- **भो भोः आश्रमवासिनस्तपस्विनः ।**[21]

विभिन्न अवसरों पर धार्मिक उत्सव का आयोजन किया जाता था। इस उत्सव के अवसर पर लोगो में उदारता, दया, करुणा तथा नैतिक मूल्य विकसित होते हैं जिससे आने वाली पीढ़ी भी अपनी सभ्यता और संस्कृति को भली भांति जान पाती है । तीर्थस्थलों को भी महत्त्व दिया जाता है। तीर्थों के जल,मिट्टी आदि का उपयोग शुभकार्यों में किया जाता था। राम - राज्याभिषेक के अवसर पर यही दृष्टिगोचर होता है -**शीघ्रं भर्तृदारकस्य रामस्य राज्यप्रभावसंयोगकारका अभिषेक-सम्भारा आनीयन्तामिति**[22]। जब तक यह सृष्टि रहेगी तब तक भारतीय संस्कृति मे माता, पिता और गुरु के प्रति श्रद्धा का भाव देखने को मिलता रहेगा।

भास के समय को आर्थिक दृष्टि से देखे तो उस समय बाजार की भूमिका महत्वपूर्ण थी। 'चारूदत्त' में नटी सूत्रधार के अत्यधिक भूखे होने पर घर में समान नहीं है इस प्रकार बाजार का संकेत देती है क्योंकि वहां सभी समान मिलते थे -**घृतं गुडो दधि तण्डुलश्चास्ति एतत् सर्वमस्माकं गेहेऽस्ति । नहि नहि । अन्तरापणे ।**[23]

भास के समय में स्वर्ण आभूषणों का भी प्रचलन था जिनका उपयोग राज परिवार और प्रजा दोनों किया करते थे। भास के नाटक 'अविमारक' में राजा कुंतीभोज के स्वर्णाभूषणों से बने भवन का अलौकिक उल्लेख किया गया है।

हंसाः स्वपन्ति मणिरत्नशिलातलेषु वैदूर्यमौक्तिककृताः सिकताप्रर्ताना: ।

स्तम्भाः प्रवालविहिताः किमिह प्रलापै-र्मन्दीभवन्ति मणिदीपहताः प्रदीपाः ॥[24]

शिल्पकला का भी प्रचलन था। विभिन्न प्रकार के परिधान, अस्त्र -शस्त्र का निर्माण,भवनों का निर्माण इत्यादि के द्वारा भी धनार्जन किया जाता था। इससे उस समय के तकनीकि शिक्षा व्यवस्था की ओर ज्ञान परम्परा का पता चलता हैं। उस समय द्यूतक्रीड़ा आदि भी धर्नाजन के साधन थे।

निष्कर्षत: इस प्रकार हम यह कह सकते है कि भास के नाटक भारतीय ज्ञान परम्परा एवं संस्कृति के संवाहक है जो भारतीय संस्कृति को सामाजिक, धार्मिक,आर्थिक और राजनीतिक दृष्टि से सुदृढ़ करते हैं। उन्होंने पौराणिकता से निकलकर अपने नाटकों को लोक में प्रचलित मान्यताओ और यथार्थ जीवन के मूल्यों से जोड़ा है, जिसमें धर्म, कर्म,त्याग, वीरता,करुणा इत्यादि सभी तत्त्व प्रभावशाली रूप से दिखाई देते हैं। भास ने महाभारत और रामायण जैसे ग्रन्थों के कथानक में मौलिक परिवर्तन करके अपनी नवीन दृष्टि डाली है ।भास के नाटक भारतीय ज्ञान और संस्कृति में नाटकों की स्वतंत्रता और मौलिकता का परिवाहक सिद्ध होते हैं।

संदर्भिका

1.ऋग्वेद - पुरुष सूक्त(10/90) मंत्र 12

2.अविमारक - 1/ 7

3.प्रतिमानाटक - 1/ 22

4.मध्यमव्यायोग - 1/15

5.महाकवि भास - डॉ. नेमिचन्द्र शास्त्री (पृष्ठ 503)

6.प्रतिज्ञायौगन्धरायण - अंक 2

7.स्वप्नवासवदत्तम् -6/9

8.मध्यमव्यायोग -3/2

9.अभिषेकनाटक -2/2

10.प्रतिमानाटक - अंक 2 पृष्ठ 73

11.प्रतिमानाटक - अङ्क 1 पृष्ठ 6

12.प्रतिमानाटक अङ्क 1 पृष्ठ 55

13.स्वप्नवासवदत्तम् षष्ठ अंक पृष्ठ 164

14. अभिमारक - 1/12

15.बालचरितम् - 4/4

16. क्रर्णभार - 1/25

17.चारुदत्तम् अंक 1 पृष्ठ 5

18.प्रतिज्ञायौगन्धरायण - 2/10

19.अविमारक - 1/2

20.प्रतिज्ञायौगन्धरायण

21.स्वप्नवासवदत्तम् - अंक 1 पृष्ठ (20/21)

22.प्रतिमानाटक - अंक 1 पृष्ठ 12

23.चारुदत्तम् - अंक 1 पृष्ठ (3/

24.अविमारक - 3/16